विचार बिन्दु

उपदेश के बजाय कहीं ज्यादा हम करके सीखते हैं। –बर्क

क्या विश्वविद्यालयों के शिक्षक और वैज्ञानिक राजस्थान के विकास में सहभागी नहीं हैं?

सरकारी कर्मचारियों के लिए महंगाई भत्ते की घोषणा, लेकिन विश्वविद्यालयों के पेंशनरों की सुध लेने वाला कोई नहीं

राजस्थान के मुख्यमंत्री ने दीपावली के अवसर पर राज्य सरकार के कर्मचारियों एवं पेंशनरों के महंगाई भत्ते (डीए) और महंगाई राहत (डीआर) में 3 प्रतिशत वृद्धि की घोषणा की है। इसके साथ ही पात्र कर्मचारियों को बोनस देने का निर्णय भी किया गया है। इस अवसर पर मुख्यमंत्री ने कहा कि राज्य के कर्मचारियों ने विकसित राजस्थान के निर्माण में महत्वपूर्ण योगदान दिया है। सरकार उनके हितों और कल्याण के प्रति प्रतिबद्ध है तथा उनके योगदान को सम्मान देने के लिए लगातार निर्णय ले रही है। निश्चित रूप से कर्मचारियों के योगदान को स्वीकार करना और उन्हें महंगाई से राहत देना सरकार का दायित्व है। लेकिन मुख्यमंत्री के इस वक्तव्य के साथ एक असहज सवाल भी खड़ा होता है–क्या राज्य के कृषि एवं अन्य विश्वविद्यालयों में वर्षों तक अध्यापन, अनुसंधान और वैज्ञानिक सेवाएं देने वाले शिक्षक, वैज्ञानिक एवं कर्मचारी राजस्थान के विकास में सहभागी नहीं रहे हैं? क्या सेवानिवृत्ति के बाद उनका योगदान और उनका अधिकार समाप्त हो जाता है?

मुख्यमंत्री की घोषणा से राज्य सरकार के कर्मचारियों और पेंशनरों को अब 63 प्रतिशत महंगाई भत्ता एवं महंगाई राहत मिलेगी। यह निर्णय स्वागतयोग्य है। लेकिन दूसरी ओर राज्य के विश्वविद्यालयों के पेंशनरों की स्थिति अत्यंत दयनीय है। जोधपुर स्थित जयनारायण व्यास विश्वविद्यालय के सेवानिवृत्त शिक्षकों एवं कर्मचारियों को पिछले छह माह से पेंशन नहीं मिली है। पेंशनरों को अपनी ही अर्जित पेंशन के लिए धरना-प्रदर्शन करना पड़ रहा है। अक्टूबर 2026 में प्रकाशित समाचारों के अनुसार, विश्वविद्यालय के पेंशनरों की लगभग 50 करोड़ रुपये से अधिक की राशि बकाया है।

बीकानेर स्थित स्वामी केशवानंद राजस्थान कृषि विश्वविद्यालय के पेंशनरों की स्थिति इससे भी अधिक चिंताजनक बताई जा रही है। यहां लगभग 22 माह की पेंशन बकाया है और पेंशनरों को महंगाई राहत के रूप में मात्र 12 प्रतिशत राशि मिलने की शिकायत है। दूसरी ओर, प्रदेश के अन्य कृषि विश्वविद्यालयों के पेंशनरों को 42 से 48 प्रतिशत तक महंगाई राहत मिल रही है। एक ही राज्य के कृषि विश्वविद्यालयों में सेवानिवृत्त कर्मचारियों के साथ इस तरह का अंतर आखिर किस आधार पर है? समान प्रकृति की सेवा और समान वेतनमान में कार्य करने वाले पेंशनरों के साथ ऐसी असमानता क्यों?

यह विडंबना ही है कि एक ओर सरकार अपने कर्मचारियों के योगदान को विकसित राजस्थान की आधारशिला बता रही है, वहीं दूसरी ओर विश्वविद्यालयों के पेंशनरों को उनकी मूल पेंशन तक नियमित रूप से उपलब्ध नहीं हो रही है। महंगाई भत्ते में तीन प्रतिशत वृद्धि की घोषणा करने वाली सरकार को यह भी बताना चाहिए कि विश्वविद्यालयों के पेंशनरों को महंगाई से राहत देने की जिम्मेदारी किसकी है? क्या विश्वविद्यालयों में सेवा देने वाले शिक्षक और वैज्ञानिक राज्य सरकार के कर्मचारी नहीं थे? क्या उन्होंने प्रदेश की कृषि, शिक्षा और ग्रामीण अर्थव्यवस्था के विकास में कोई योगदान नहीं दिया?

मुख्यमंत्री ने कर्मचारियों को विकसित राजस्थान का महत्वपूर्ण स्तंभ बताया है। इस भावना का सम्मान तभी सार्थक होगा, जब इस सम्मान का दायरा केवल सचिवालय और सरकारी विभागों तक सीमित न रहे, बल्कि विश्वविद्यालयों के शिक्षक, वैज्ञानिक और कर्मचारी भी उसमें शामिल हों। विकास में योगदान देने वालों के बीच सेवानिवृत्ति के बाद ऐसा भेदभाव उचित नहीं कहा जा सकता।

राजस्थान की अर्थव्यवस्था में कृषि का महत्वपूर्ण स्थान है। प्रदेश के कृषि विश्वविद्यालयों ने दशकों तक कृषि शिक्षा, अनुसंधान और प्रसार के माध्यम से किसानों की उत्पादकता बढ़ाने, नई फसल किस्में विकसित करने, जल संरक्षण, मृदा स्वास्थ्य सुधारने तथा कृषि तकनीक किसानों तक पहुंचाने में उल्लेखनीय भूमिका निभाई है। इन विश्वविद्यालयों के शिक्षकों और वैज्ञानिकों ने अपने जीवन के महत्वपूर्ण वर्ष प्रयोगशालाओं, अनुसंधान केंद्रों, खेतों और कक्षाओं में बिताए हैं। उनके अनुसंधान का लाभ प्रदेश के लाखों किसानों को मिला है। कृषि विश्वविद्यालयों से निकले कृषि स्नातक और वैज्ञानिक आज देश-विदेश में अपनी सेवाएं दे रहे हैं। क्या इस योगदान को विकसित राजस्थान के निर्माण में शामिल नहीं किया जाना चाहिए?

विडंबना यह भी है कि विश्वविद्यालयों की स्वायत्तता का तर्क देकर राज्य सरकार अपनी जिम्मेदारी से बचती रही है। विश्वविद्यालयों को आर्थिक संसाधनों की कमी का हवाला देकर पेंशन भुगतान में असमर्थता जताई जाती है। लेकिन सवाल यह है कि जब विश्वविद्यालयों की स्थापना राज्य सरकार ने की, उनके सेवा नियम और वेतनमान राज्य सरकार की नीतियों के अनुरूप निर्धारित हुए तथा शिक्षकों और कर्मचारियों ने राज्य के शैक्षणिक एवं विकास संबंधी लक्ष्यों को पूरा करने में अपना जीवन लगाया, तो सेवानिवृत्ति के बाद उनकी पेंशन की जिम्मेदारी से सरकार कैसे अलग हो सकती है?

पेंशन कोई सरकारी अनुदान या दया से दिया जाने वाला आर्थिक लाभ नहीं है। यह कर्मचारी की वर्षों की सेवा के बदले अर्जित अधिकार है। कर्मचारी अपने सेवाकाल में भविष्य की आर्थिक सुरक्षा के विश्वास के साथ काम करता है। पेंशन में विलंब या उसका भुगतान रोकना केवल आर्थिक परेशानी पैदा करना नहीं, बल्कि उस विश्वास को तोड़ना है। सेवानिवृत्त व्यक्ति के लिए पेंशन ही बुढ़ापे का मुख्य आर्थिक सहारा होती है। दवाइयों, चिकित्सा, दैनिक आवश्यकताओं और पारिवारिक जिम्मेदारियों के लिए वह इसी पर निर्भर रहता है। छह माह या 22 माह तक पेंशन नहीं मिलना किसी भी संवेदनशील सरकार के लिए गंभीर चिंता का विषय होना चाहिए।

मुख्यमंत्री ने कर्मचारियों को विकसित राजस्थान का महत्वपूर्ण स्तंभ बताया है। इस भावना का सम्मान तभी सार्थक होगा, जब इस सम्मान का दायरा केवल सचिवालय और सरकारी विभागों तक सीमित न रहे, बल्कि विश्वविद्यालयों के शिक्षक, वैज्ञानिक और कर्मचारी भी उसमें शामिल हों। विकास में योगदान देने वालों के बीच सेवानिवृत्ति के बाद ऐसा भेदभाव उचित नहीं कहा जा सकता।

सरकार को चाहिए कि वह विश्वविद्यालयों के पेंशनरों की बकाया पेंशन का तत्काल भुगतान सुनिश्चित करे। महंगाई राहत में राज्य सरकार के पेंशनरों के समान वृद्धि लागू करने की व्यवस्था करे और विश्वविद्यालयों की पेंशन समस्या का स्थायी समाधान निकाले। इसके लिए राज्य सरकार को नियमित बजटीय प्रावधान करना चाहिए, ताकि विश्वविद्यालयों की आर्थिक स्थिति चाहे जैसी हो, पेंशन भुगतान प्रभावित न हो।

विकसित राजस्थान का सपना केवल नई सड़कों, भवनों, निवेश और औद्योगिक परियोजनाओं से पूरा नहीं होगा। इसका वास्तविक आधार उन लोगों के प्रति सम्मान और न्याय है, जिन्होंने अपने जीवन का बहुमूल्य समय प्रदेश के निर्माण में लगाया है। मुख्यमंत्री से यह अपेक्षा स्वाभाविक है कि वे बताएं–क्या विश्वविद्यालयों के शिक्षक, वैज्ञानिक और कर्मचारी राजस्थान के विकास के सहभागी नहीं हैं? यदि हैं, तो फिर उनके साथ यह सौतेला व्यवहार क्यों?

–अतिथि सम्पादक,
प्रोफेसर (डा.) पी. सी. कंठालिया,
पूर्व विभागाध्यक्ष (मृदा विज्ञान) एवं मुख्य वैज्ञानिक,
महाराणा प्रताप कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, उदयपुर

राशिफल गुरूवार 19 नवम्बर, 2026



पंडित अनिल शर्मा

कार्तिक मास, शुक्ल पक्ष, नवमी तिथि, गुरूवार, विक्रम संवत–2083, पूर्वाभाद्रपद नक्षत्र शुक्रवार प्रात: 6:57 तक, व्याघात योग प्रात: 7:43 तक, कौलव करण प्रात: 7:07 तक, चन्द्रमा रात्रि 12:50 से मीन राशि में संचार करेगा।

ग्रह स्थिति– सूर्य-वृश्चिक, चन्द्रमा-मकर, मंगल-सिंह, बुध-तुला, गुरू-सिंह, शुक्र-कन्या, शनि-मीन, राहु-कुम्भ, केतु-सिंह

आज रवियोग सम्पूर्ण दिन-रात है। आज श्री हरि जयन्ती, पंचक है। आज नवमी तिथि में वृद्धि हुई है।

श्रेष्ठ चौघड़िया– शुभ सूर्योदय से 8:13 तक, चर 10:51 से 12:12 तक, लाभ-अमृत 12:12 से 2:51 तक, शुभ 4:11 से सूर्यास्त तक।

राहुकाल– 1:30 से 3:00 तक, सूर्योदय 6:53, सूर्यास्त 5:31

मेष
आर्थिक/वित्तीय मामलों के लिए दिन अच्छा रहेगा। आय में वृद्धि होगी। व्यावसायिक कार्यों के लिए भागदौड़ बनी रहेगी। घर-परिवार में धार्मिक-मांगलिक कार्य सम्पन्न हो सकते हैं।

वृष
व्यावसायिक को प्राथमिकता से करने का प्रयास करें। व्यावसायिक कार्य शीघ्रता/सुगमता से बनने लगेंगे। नवीन कार्य योजना का क्रियान्वयन होगा। परिवार में सामाजिक समारोह सम्पन्न हो सकते हैं।

मिथुन
नवीन कार्यों के संबंध में सकारात्मक आश्वासन प्राप्त होंगे। अटके हुए कार्य बनने लगेंगे। व्यावसायिक प्रयासों में उचित सफलता मिलेगी। व्यावसायिक वार्ता के लिए दिन अच्छा रहेगा।

कर्क
चन्द्रमा अष्टम भाव में शुभ नहीं है। व्यक्तिगत परेशानियों के कारण मानसिक तनाव रहेगा। आवश्यक कार्यों में विलम्ब हो सकता है। बनते कार्य बिगड़ सकते हैं।

सिंह
परिवार में आपसी सहयोग-समन्वय बना रहेगा। परिवार में आपसी सहयोग से महत्वपूर्ण कार्य सम्पन्न हो सकते हैं। आज परिवार में मांगलिक कार्य सम्पन्न हो सकते हैं।

कन्या
विवादित मामलों से राहत मिल सकती है। अस्त-व्यस्त दिनचर्या में सुधार होगा। अटके हुए कार्य बनने लगेंगे। व्यावसायिक कार्यों से संबंधित आर्थिक समस्या का समाधान हो सकता है।

तुला
व्यावसायिक कार्यों से संबंधित योजना बनेगी। नवीन कार्य योजना का क्रियान्वयन होगा। आर्थिक स्थिति में सुधार होगा। घर-परिवार में चल रहे आपसी मतभेद दूर होंगे।

वृश्चिक
घर-परिवार में धार्मिक-मांगलिक कार्य सम्पन्न हो सकते हैं। परिवार में अतिथियों का आगमन बना रहेगा। व्यावसायिक कार्यों में व्यस्तता बनी रहेगी। आर्थिक स्थिति ठीक रहेगी।

धनु
परिवार में मन को प्रसन्न करने वाले संदेश प्राप्त होंगे। मित्रों/रिश्तेदारों के सहयोग से अटके हुए कार्य बनने लगेंगे। शुभ कार्य से संबंधित यात्रा संभव है।

मकर
आर्थिक कारणों से अटके हुए कार्य बनने लगेंगे। अटका हुआ धन प्राप्त होगा। व्यावसायिक कार्यों के संबंध में शुभ संदेश प्राप्त होंगे। चलते कार्यों में प्रगति होगी। स्वास्थ्य में सुधार होगा।

कुंभ
मानसिक तनाव दूर होगा। मन:स्थिति में सुधार होगा। आज आवश्यक कार्य योजनानुसार बनने लगेंगे। व्यावसायिक संपर्क बनेंगे। व्यावसायिक अनुबंध प्राप्त होंगे। परिवार में उत्सव जैसा माहौल रहेगा।

मीन
घर-गृहस्थी के खर्चों में अनावश्यक वृद्धि हो सकती है। पारिवारिक कार्यों के कारण भागदौड़ रहेगी। आज मन में असंतोष बना रहेगा। समय अनर्गल कार्यों में खराब हो सकता है।

जयपुर की ज्यौनार : जब हजारों लोगों की पंगत में परोसी जाती थी अपनत्व और आत्मीयता की मिठास

जैपुर – तीन सदियों का गुलाबी सफ़र.....



डॉ गोरधन लाल शर्मा

जयपुर की पहचान उसके भव्य महलों, हवेलियों, मंदिरों, चौपड़ों और गुलाबी इमारतों से जितनी है, उतनी ही यहां की विशिष्ट सामाजिक और सांस्कृतिक परंपराओं से भी रही है। इन्हीं परंपराओं में एक अनूठा नाम है–जयपुर की ज्यौनार। जीमने-जिमाने की यह परंपरा कभी गुलाबी नगरी के सामाजिक जीवन का अभिन्न अंग हुआ करती थी। ज्यौनार का निमंत्रण मिलते ही घरों में उत्साह छा जाता था। किसकी ज्यौनार है, कब होगी और उसमें क्या-क्या परोसा जाएगा, इसकी चर्चा पहले से होने लगती थी। परिवार सहित पंगत में बैठकर जीमना सामाजिक मेलजोल और सामूहिक उल्लास का विशेष अवसर माना जाता था।

आज बदलती जीवनशैली के बीच यह परंपरा लगभग विलुप्त हो चुकी है, लेकिन इसकी स्मृतियां जयपुर की सांस्कृतिक चेतना में आज भी जीवित हैं। कुछ समय पहले जब पारंपरिक ज्यौनार को फिर से सजाने की पहल हुई और बड़ी संख्या में लोगों ने पंगत में बैठकर भोजन किया, तो पुराने जयपुर की आत्मीय तस्वीर जैसे एक बार फिर साकार हो उठी।

सरे बाजार सजती थीं हजारों लोगों की पंगतें -जयपुर की ज्यौनार का स्वरूप बेहद भव्य और व्यवस्थित होता था। पुराने समय में एक-दो हजार लोगों के सामूहिक भोज सरे बाजार आयोजित किए जाते थे। खुले स्थानों और बाजारों में कनातें लगाकर लंबी-लंबी पंगतें सजाई जाती थीं। उस दौर की सादगी और सस्ते खानपान को बयां करने वाली एक कहावत भी प्रचलित थी कि दो पैसे में चूरमा, दाल और बाटी तैयार हो जाती थी। हजारों लोगों को एक साथ भोजन कराने के लिए थाली-कटोरियों के बजाय पत्तल और दोने इस्तेमाल किए जाते थे। सैकड़ों परसगारे देखते ही देखते पूरी पंगत में पत्तल-दोने सजा देते थे। इसके बाद शुरू होती थी व्यंजनों की परसगारी, जो अपने आप में देखने लायक दृश्य हुआ करती थी।

देशी घी के लड्डुओं से महक उठता था ज्यौनार स्थल -ज्यौनार का सबसे आकर्षक दृश्य लड्डुओं की परसगारी का होता था। परसगारे पारंपरिक वेशभूषा में सजे होते थे। दो लांग की धोती, कमर में कसा कमरबंध, कमरी अंगरखी, सिर पर पगड़ी, कानों में मुरकी, गले में बलेवड़ा और हाथों में सोने के कड़े उनकी विशिष्ट पहचान थे।

खजूर की कठोर शाखाओं से बनी टोकरियों में पलाश की पत्तलों पर रखे देशी घी और देशी खांड के सुगंधित लड्डू लेकर वे पंगत की ओर बढ़ते थे। भंडार यानी कोठ्यार से एक साथ निकलते सैकड़ों परसगारों की फुर्ती देखते ही बनती थी। देखते-देखते हजारों पत्तलों में लड्डू सज जाते और देशी घी की सौंधी खुशबू पूरे आयोजन स्थल को महका देती थी।

ओजी लाडू हाला... की मनुहार से गूंजती थी पंगत - लड्डुओं के बाद अन्य व्यंजनों की बारी आती थी। घोल की नुकती अथवा खेलरे काथैण्डी की खटाईदार दाना मेथी और दाख-छिवारों की लौंजी से दोने सजाए जाते। इसके बाद परोसी जाती थीं मसालेदार दाल से भरी कुरकुरी कचौड़ियां। व्यंजनों की संख्या भले ही सीमित रहती थी, लेकिन उनके स्वाद और परोसने के अंदाज में कोई कमी नहीं होती थी। हजारों लोगों तक भोजन सहजता से पहुंच सके, इसलिए लड्डू, कचौड़ी और सलौनी को ज्यौनार के प्रमुख व्यंजनों में स्थान मिला था। पूरियां सामान्यत: इस सामूहिक भोज का हिस्सा नहीं होती थीं। पूरी पंगत में परसगारी हो जाने के बाद सामूहिक रूप से भोजन शुरू करने का संकेत दिया जाता था। परसगारे भी इस आदेश को आगे दोहराते और हजारों लोगों की चहल-पहल के बीच अचानक अनुशासित शांति छा जाती थी। इस बीच महिलाओं की मीठी मनुहारें ज्यौनार के वातावरण में अलग ही रंग भर देती थीं। कहीं से आवाज आती-ओजी लाडू हाला... तो कहीं कोई पुकारती-म्हारा बीरा लाडू तो घाल जाओ। कोई अजी घोल हाला कहती तो कोई अजी कचौड़ी हाला। कई बार महिलाएं परसगारे की धोती खींचकर अपनी पत्तल की ओर इशारा करते हुए कहतीं-म्हारा बाबा सुणो तो! ढूंढाड़ी बोली की ये आत्मीय पुकारें ज्यौनार की सबसे खूबसूरत स्मृतियों में शामिल हैं।

एक पंगत उठती, दूसरी सज जाती -ज्यौनार में भोजन का आनंद केवल व्यंजनों तक सीमित नहीं था। भोजन समाप्त होने पर जब पूरी पंगत एक साथ उठती तो कई महिलाओं के हाथों में दो-चार लड्डू भी दिखाई देते थे। वे इन्हें अपने तोते अथवा दूसरे पशु-पक्षियों के लिए साथ ले जाती थीं। यह छोटा-सा दृश्य उस समय के सहज पारिवारिक जीवन की आत्मीय झलक प्रस्तुत करता था। एक पंगत उठते ही नाई और अन्य सेवाभावी लोग पत्तल-दोने हटाकर सफाई में जुट जाते। कुछ ही देर में अगली पंगत तैयार हो जाती। एक ही आयोजन में दो-तीन पंगतों का जीमना सामान्य बात थी। हजारों लोगों के भोजन की यह व्यवस्था तत्कालीन सामूहिक प्रबंधन, अनुशासन और सेवा भावना का अनूठा उदाहरण थी।

जब महिलाएं गोटे-किनारी से सजे घाघरे पहनकर, गीत गुनगुनाती हुई ज्यौनार स्थल से बाहर निकलतीं तो पूरा वातावरण उत्सवमय हो उठता था। मानो पूरा जयपुर कुछ समय के लिए रोजमर्रा की चिंताओं से मुक्त होकर सामूहिक खुशियों में सराबोर हो गया हो।

महाराजाओं के हेड़ों से जुड़ी थी ज्यौनार की परंपरा -जयपुर की इन विशाल ज्यौनारों को ढूंढाड़ी बोली में हेड़े भी कहा जाता था। महाराजाओं की ओर से भी ऐसे आयोजन विशेष रूप से करवाए जाते थे। तत्कालीन महाराजा सवाई माधोसिंह द्वितीय धर्मपरायण और आस्तिक शासक थे। श्रीगोविंददेवजी मंदिर में निरंतर होने वाले श्रीमद्भागवत पारायण की पूर्णाहुति पर उनकी ओर से जातिवार हेड़ों का आयोजन किया जाता था। इन आयोजनों में सूचना देने की भी विशिष्ट परंपरा थी। रात के सन्नाटे में डिम-डिम घोष के साथ नगर में मुनादी की जाती, ताकि ज्यौनार का संदेश हर घर तक पहुंचे। प्रारंभ में आयोजन स्थल पर सभी के प्रवेश की छूट थी, लेकिन बाद में व्यवस्था बनाए रखने और जातिगत आधार पर होने वाले दुरुपयोग को रोकने के लिए टिकट प्रथा शुरू की गई। जिस समाज का हेड़ा होता, टिकट भी उसी समाज तक सीमित रखे जाते थे। इस तरह ज्यौनार राजपरंपरा, धार्मिक आयोजनों और जयपुर के तत्कालीन सामाजिक जीवन से गहराई से जुड़ी हुई थी।

समय के साथ सिमट गई पंगतों की परंपरा -समय बदला तो ज्यौनार का स्वरूप भी बदलता चला गया। विवाह और अन्य मांगलिक अवसरों पर होने वाले विशाल सामूहिक भोज धीरे-धीरे सीमित होने लगे। खानपान की व्यवस्थाओं में आधुनिकता आई और पंगतों की जगह कुर्सी-टेबल तथा बुफे ने ले ली। देखते ही देखते हजारों लोगों को एक साथ पत्तलों पर बैठाकर जीमाने की परंपरा लगभग इतिहास बन गई। हालांकि, इस बदलाव के साथ जयपुर की ज्यौनार की ख्याति कम नहीं हुई। देशी घी के लड्डुओं की खुशबू, कचौड़ियों का स्वाद, पत्तलों की कतारें और परसगारों की फुर्ती आज भी शहर की सांस्कृतिक स्मृतियों का हिस्सा हैं।

ज्यौनार फिर सजी तो लौट आया पुराना जयपुर -आधुनिक दौर में जब भोजन के आयोजन होटल, मैरिज गार्डन और बुफे तक सिमटते जा रहे हैं, ऐसे में पारंपरिक ज्यौनार को फिर से जीवंत करने की पहल विशेष महत्व रखती है। कुछ समय पहले जयपुर में आयोजित ऐसी ही ज्यौनार में बड़ी संख्या में लोगों ने पारंपरिक पंगत में बैठकर भोजन का आनंद लिया। लोगों का उत्साह बता रहा था कि नई पीढ़ी भी अपनी सांस्कृतिक विरासत से जुड़ने के लिए उत्सुक है। जयपुर के 299वें स्थापना दिवस पर ज्यौनार की इस परंपरा को याद करना अतीत के स्वाद और वैभव को महसूस करने जैसा है। यह परंपरा बताती है कि किसी शहर की पहचान केवल उसकी इमारतों और स्थापत्य में नहीं, बल्कि वहां के लोगों के आपसी रिश्तों, व्यवहार और सामाजिक संस्कारों में भी बसती है।

जयपुर की ज्यौनार एक ऐसी सांस्कृतिक विरासत है, जिसमें भोजन के साथ सेवा, अनुशासन, सामाजिक समरसता और आत्मीयता भी परोसी जाती थी। पंगत में बैठा हर व्यक्ति उस सामूहिक आनंद का सहभागी होता था, जहां न किसी के पास जल्दी थी और न किसी को अकेले जीमने की मजबूरी। क्योंकि जयपुर की ज्यौनार में सिर्फ लड्डू, कचौड़ियां और सलौनी ही नहीं परोसी जाती थीं, वहां रिश्तों की मिठास, अपनत्व की खुशबू और पूरे शहर को एक सूत्र में पिरोने वाली आत्मीयता भी जीमी जाती थी। यही वह स्वाद है, जिसे वक्त भी जयपुर की स्मृतियों से मिटा नहीं पाया।

–डॉ. गोरधनलाल शर्मा,
समाजशास्त्री एवं वरिष्ठ अधिकारी

-दाम तो परण्या का लागें, देवर नाम थारो र-

धार्मिक संस्थानों ने शिक्षा को अपनी आय का एक जरिया बना रखा है



मदन सिंह काला

राजस्थान की एक पुरानी कहावत है – "दाम तो परण्या का लागें, देवर नाम थारो र।" मतलब खर्चा पति उठाए, नाम देवर का हो। आज भारत की शिक्षा व्यवस्था पर यह कहावत अक्षरश: लागू होती है। दाम जनता का लगता है, जमीन सरकार देती है, टैक्स की छूट जनता के पैसे से दी जाती है, बच्चा गरीब का पढ़ता है, और नाम लगता है – फलां मंदिर ट्रस्ट, फलां मिशन, फलां मठ, फलां डेरा। धर्म का काम था विद्या दान करना, आज धर्म का सबसे बड़ा धंधा विद्या को बेचना हो गया है। यह स्थिति सीधे हमारे संविधान की आत्मा के खिलाफ है।

संविधान की प्रस्तावना कहती है– "सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक न्याय" और अनुच्छेद 38 कहता है राज्य ऐसी सामाजिक व्यवस्था बनाएगा जिसमें न्याय हो। अनुच्छेद 46 तो साफ कहता है – राज्य एससी/एसटी और कमजोर वर्गों के शिक्षा और अर्थ संबंधी हितों की विशेष रक्षा करेगा। पर आज हो उल्टा रहा है।

1. दान से शुरू, दुकान पर खत्म - खेल कैसे शुरू हुआ? - 1950-60 तक मंदिर, मस्जिद, चर्च, गुरुद्वारा, मठ सच में धर्मशाला और पाठशाला चलाते थे। गांव का पुजारी बच्चों को पट्टी पर अक्षर सिखाता था, चर्च आदिवासी इलाके में टाट की झोपड़ी में स्कूल खोलता था। पैसा दान से आता था, जाता भी दान में ही था। यह संविधान के अनुच्छेद 41 और 45 के अनुरूप था, जिसमें कहा गया है कि राज्य अपनी क्षमता से शिक्षा का अधिकार और 14 साल तक मुफ्त शिक्षा का प्रबंध करेगा। फिर 1990 के बाद सरकार ने शिक्षा में प्राइवेट सेक्टर को छूट दी। धार्मिक ट्रस्टों ने देखा कि इससे अच्छा व्यापार कोई नहीं। कारण तीन थे – 1. ट्रस्ट को जमीन सरकार कौड़ियों के भाव दे देती है। जयपुर, भोपाल, लखनऊ में जहाँ जमीन का रेट 50,000 गज है, वहाँ ट्रस्ट को 500 गज में मिल गई – 'शिक्षा-सेवा' के नाम पर। 2. ट्रस्ट को इनकम टैक्स नहीं देना – धारा 12ए, 80जी। 3. ट्रस्ट के नाम पर भरोसा है। बस, यहीं से दान दुकान बन गया। आज देश में 1 लाख से ज्यादा शिक्षण संस्थान धार्मिक ट्रस्ट के नाम पर रजिस्टर्ड हैं, पर चल रहे हैं पूरी तरह कंपनी की तरह। यह अनुच्छेद 39 (बी)(सी) के खिलाफ है, जो कहता है कि धन का संकेंद्रण कुछ हाथों में नहीं होना चाहिए।

2. हिसाब लगाइए - कमाई कितनी है और संविधान क्या कहता है? -एक ट्रस्ट जयपुर के पास 10 एकड़ जमीन लेता है। सरकार से मिली 5 करोड़ की जमीन पर वह सीबीएससी स्कूल खोलता है। 2000 बच्चे X 60,000 फीस = 12 करोड़। बिल्डिंग फंड के नाम पर 6 करोड़ अलग। बस, ड्रेस, किताब का ठेका खुद को – 3 करोड़। कुल आय – 21 करोड़। खर्च – 6 करोड़। बचा 15 करोड़ सरप्लस। यह सरप्लस ही अनुच्छेद 14 – समानता के अधिकार का उल्लंघन करता है। एक तरफ सरकारी स्कूल का एससी/एसटी बच्चा टूटी छत में पढ़ता है, दूसरी तरफ ट्रस्ट का स्कूल उसी जनता की जमीन और टैक्स छूट से मुनाफा कमाता है। अनुच्छेद 21ए कहता है 6-14 साल के हर बच्चे को मुफ्त और अनिवार्य शिक्षा मिलेगी, पर यहाँ शिक्षा मुफ्त नहीं, सबसे महंगी बिक रही है।

3. परण्या कौन, देवर कौन? और शिक्षक-छात्र कहाँ हैं? - कहावत का परण्या है – आम जनता और सरकार। देवर है – ट्रस्ट का मैनेजमेंट। पर इस खेल में सबसे ज्यादा नुकसान किसका हुआ? एससी/एसटी/ ओबीसी का।

शिक्षकों में – संविधान का अनुच्छेद 16(4) कहता है राज्य पिछड़े वर्गों के लिए नौकरियों में आरक्षण कर सकता है। सरकारी सहायता प्राप्त (Aided) धार्मिक स्कूलों में यह लागू है, वहाँ एससी 16 प्रतिशत, एसटी 12 प्रतिशत, ओबीसी 21 प्रतिशत शिक्षक मिल जाते हैं। पर 90 प्रतिशत प्राइवेट अनएडेड धार्मिक स्कूलों में कोई आरक्षण लागू नहीं। सुप्रीम कोर्ट के TMA Pai फैसले की आड़ में ये ट्रस्ट शिक्षक अपनी मर्जी से रखते हैं। नतीजा – बड़े कॉन्वेंट और मंदिर ट्रस्ट के सीबीएससी स्कूल में एससी/एसटी/ओबीसी शिक्षक 5-10 प्रतिशत ही हैं, जबकि आबादी 50 प्रतिशत है। प्रबंधन में तो 95 प्रतिशत एक ही जाति-परिवार के लोग हैं। यह अनुच्छेद 16(1) – अवसर की समानता के खिलाफ है।

विद्यार्थियों में – अनुच्छेद 15(4) और 15(5) राज्य को सामाजिक और शैक्षणिक रूप से पिछड़े वर्गों के लिए विशेष प्रावधान की शक्ति देता है। सरकारी स्कूल में यह लागू है। पर प्राइवेट धार्मिक ट्रस्ट के स्कूल किसी को जाति के कारण मना नहीं करते, वे फीस के कारण मना करते हैं। एससी/एसटी परिवार की औसत आय 10,000 महीना है, वह 5,000 फीस नहीं भर सकता। इसलिए ट्रस्ट के महंगे स्कूल में एससी 3-4 प्रतिशत, एसटी 1-2 प्रतिशत ही हैं। कई ट्रस्ट अनुच्छेद 30 – अल्पसंख्यकों को शिक्षण संस्थान चलाने का अधिकार – का गलत इस्तेमाल कर आरटीई के 25 प्रतिशत गरीब कोटे से भी छुट्टी ले लेते हैं। यह अनुच्छेद 46 की मूल भावना को खत्म करता है।

4. गरीब कहाँ गया? -ट्रस्ट के स्कूल में एसी क्लास है, स्विमिंग पूल है, पर उसी गाँव का एससी/एसटी बच्चा बाहर चाय की दुकान पर कप धो रहा है। उसे मुफ्त यूनिफॉर्म, किताब, भोजन नहीं मिलता। सरकारी स्कूल में समग्र शिक्षा के तहत यह सब मिलता था, ट्रस्ट के स्कूल में नहीं। क्योंकि ट्रस्ट कहता है हम अनएडेड हैं। सरकार की छात्रवृत्ति का फॉर्म भरने को कहा जाता है, जो एक साल बाद आती है। विद्या दान तो तब होता जब ट्रस्ट कहता – हमारी 2000 सीट में 500 सीट उन बच्चों की है जिनके पास फीस नहीं, हम उन्हें मुफ्त पढ़ाएंगे। पर ऐसा गिनती के ट्रस्ट ही करते हैं।

5. समाधान - संविधान को फिर से लागू करना होगा -धर्म को गाली देना समाधान नहीं, संविधान को लागू करना समाधान है।

पहला – जमीन का हिसाब, अनुच्छेद 39 के तहत। अगर ट्रस्ट को रियायती जमीन मिली है, तो उसकी फीस सरकारी स्कूल से दोगुनी से ज्यादा न हो, या 50 प्रतिशत सीटें एससी/एसटी/ओबीसी को मुफ्त देनी होंगी।

दूसरा – सरप्लस का हिसाब, अनुच्छेद 38 के तहत। ट्रस्ट के हर स्कूल का ऑडिट चैरिटी कमिश्नर करे। कुल आय का 70 प्रतिशत उसी साल शिक्षक, छात्रवृत्ति, एससी/एसटी/ ओबीसी के लिए हॉस्टल पर खर्च हो।

तीसरा – बोर्ड पर नाम, अनुच्छेद 19(1)(ए) सूचना के अधिकार के तहत। हर धार्मिक ट्रस्ट के स्कूल के गेट पर लिखा हो– "इस संस्था को सरकार से इतनी जमीन मिली, इतनी टैक्स छूट मिली, इस साल इतने एससी/ एसटी/ ओबीसी बच्चों को मुफ्त पढ़ाया और इतने एससी/ एसटी/ ओबीसी शिक्षकों को नौकरी दी।"

आज जरूरत है कि मंदिर की दान-पेटी के साथ-साथ उसकी विद्या-पेटी का भी हिसाब लगे। भक्त को पता चले कि उसका 10 पत्थर पर चढ़ा या किसी गरीब बच्चे की किताब बना। संविधान ने अनुच्छेद 51ए (जे) में वैज्ञानिक दृष्टिकोण और मानववाद की बात कही है, वह तभी आएगा जब शिक्षा दुकान नहीं, दान बनेगी। नहीं तो आने वाली पीढ़ी पूछेगी – इतने बड़े-बड़े मंदिर, इतने बड़े-बड़े स्कूल, फिर भी मेरा एससी/ एसटी/ओबीसी बच्चा अनपढ़ क्यों?

–मदन सिंह काला,
सेवानिवृत्त आई.ए.एस अधिकारी

शिक्षा की गिरती गुणवत्ता, थकता समाज



प्रोफेसर अशोक कुमार

जब कोई जागरूक शिक्षक लगातार शिक्षा में व्यवस्थागत खामियों-जैसे शोध की गिरती गुणवत्ता, फर्जी हाजिरी, नीतिगत विसंगतियों और प्रशासनिक अकर्मण्यता-को उजागर करता है और लाखों पाठक उससे जुड़ते हैं, तो वह एक बौद्धिक आंदोलन की तरह लगता है। लेकिन व्यूअरशिप का 167 से घटकर 10 पर आना और विमर्श का धीमा पड़ना सीधे तौर पर सामाजिक एवं बौद्धिक इश्यू फैटीग का स्पष्ट प्रमाण है। इस पूरे परिदृश्य और इसके गंभीर प्रभावों पर कुछ मुख्य पहलू विचारणीय हैं:

1. 'मुद्दा थकान' से 'व्यवस्थागत संवेदनहीनता' तक का सफर

सार्वजनिक चेतना का एक कड़वा सच यह है कि पाठक लगातार समस्याओं को पढ़ते-पढ़ते मनोवैज्ञानिक रूप से थक जाते हैं, विशेषकर तब जब उन्हें लगता है कि इतने खुलासों और चर्चाओं के बाद भी नीतिगत धरातल पर कोई ठोस सुधार नहीं हो रहा। पाठक निराशा की इस भावना के शिकार हो जाते हैं कि "लिखने या पढ़ने से क्या बदलेगा, व्यवस्था तो ऐसी ही रहेगी।" यही निराशा धीरे-धीरे संवेदनहीनता में बदल जाती है और लोग गंभीर विकृतियों को भी सिस्टम का हिस्सा मानकर स्वीकार कर लेते हैं।

**1. न्यू नॉर्मल बन